प्रेमचन्द की कहानियों में नारी का अविवाहित जीवन

*डॉ॰ सुरेश सरोहा
एम.ए. (हिंदी), नेट, पीएच॰डी॰,
हिंदी प्रवक्ता,
गाँव व डॉ0 मदीना, रोहतक
(हरियाणा)

भारतीय साहित्य का उदय ऋग्वेद से होता है। ऋग्वेदकालीन समाज पितृसत्तात्मक था। परन्तु उस समय नारी के प्रति उदार दृष्टिकोण था। जीवन के सभी क्षेत्रों में नारी को महत्ता प्राप्त थी। युद्ध और विजय में शान्ति और सम्पन्नता प्राप्त करने के लिए उसका सहयोग आवश्यक समझा जाता था। इस काल की स्त्री के विषय में कहा गया है–कृषि से लेकर आखेट, परिवार से लेकर समूह, सभी जगह वह पुरुष के साथ रहती थी। वह दान देती थी, सोमरस बनाती और पीती थी।

वैदिक काल के पश्चात् उत्तर युग में ऋषियों ने तप को अधिक महत्त्व दिया। अतः वैदिक काल में उच्च स्थान प्राप्त करने वाली नारी एक पीढ़ी नीचे उतर आई। महाभारत काल तक आते–आते नारियों को शूद्रों के बराबर समझा जाने लगा। यद्यपि महाभारत काल में भी स्त्री के महत्त्व को समझा गया है। डॉ॰ बेनीप्रसाद लिखते हैं – ''पत्नी ही घर है जिस घर में पत्नी नहीं, वह घर नहीं है– धर्म, अर्थ और काम में देश और परेदश में, सुख में, दुःख में, हर बात में पत्नी ही साथी है।''[1]

जैसे–जैसे समय बीतता गया नारी की हालत दीन होती गई। समाज में पुरुष की प्रधानता होती गई महात्मा बुद्ध के समय में भी नारी की स्थिति में और उसके महत्त्व के संबंध में ह्रास होता गया। स्वयं गौतम बुद्ध भी इस विचार के नहीं थे कि स्त्री को बौद्ध विहारों में जाने की अनुमति दी जाए। हाँ, बाद में महात्मा बुद्ध ने नारी को पुरुषों के बराबर अधिकार दिलाने का प्रयत्न किया। उस समय की स्त्री आर्थिक रूप से किसी पर बोझ नहीं थी। हाँ जैन धर्म में नारी के प्रति दृष्टि उदार नहीं थी। उन्होंने स्त्री को माया और उपकारी माना है।

मध्यकाल ऐश्वर्य का काल था। राजदरबारों में विलासिता की भावना को प्रश्रय मिला हुआ था। वैदिक काल की सम्माननीय नारी अब भोग्या बन गई थी। रीतिकाल में नारी और उसके सौंदर्य का मांसल वर्णन हुआ तथा अब समाज में सती–प्रथा, पर्दा–प्रथा आदि कुरीतियाँ आ गई थी। उन्नीसवीं शताब्दी में नारी की स्थिति में व्यापक परिवर्तन हुए। पश्चिमी सभ्यता, संस्कृति तथा शिक्षा के प्रभाव से नारी की स्थिति में सुधार हुआ। राजा राममोहन राय ने सती प्रथा का विरोध किया। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने विधवा विवाह पर जोर दिया। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने 1875 में आर्य समाज की स्थापना की और नारी शिक्षा पर बल दिया और पर्दा–प्रथा का विरोध किया।

बीसवीं शताब्दी में भारतीय नारी ने अनुभव किया कि वह पुरुषों के समान कार्य कर गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त कर सकती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय नारी को सामाजिक व राजनीतिक जीवन में महत्वपूर्ण पद दिए गए। सन् 1950 ई0 में भारतीय संविधान लागू कर नारी को पुरुष के बराबर अधिकार दिए गए।

समाज की परिवर्तनशील परिस्थितियों के अनुसार ही प्रेमचन्द के विचार नारी की स्थिति, सम्मान व अधिकार हेतु परिवर्तित होते रहे हैं, फिर भी उन्होंने 'गोदान' में कहलवाया है कि नारी पुरुष से उतनी ही श्रेष्ठ है जितना प्रकाश अंधकार से। साहित्यकार अपने युग और वातावरण से प्रभावित होता है। श्रेष्ठ साहित्यकार भी वही माना जाता है जिसके साहित्य में उसका युग साकार हो उठा हो। स्वयं प्रेमचन्द ने इस संबंध में कहा है – ''साहित्यकार बहुधा अपने देश–काल से प्रभावित होता है। कोई लहर देश में उठती है, तो साहित्यकार के लिए उससे अविचलित रहना असंभव हो जाता है। उसकी विशाल आत्मा अपने देश–बन्धुओं के कष्टों से विकल हो उठी है और इस तीव्र विकलता में वह रो उठता है। परन्तु उसके रूदन में भी व्यापकता होती है। वह स्वदेश का होकर भी सार्वभौम रहता है।''[2]

प्रेमचन्द युगीन सामाजिक जीवन की अधिकांश समस्याएँ परिवार एवं नारी जीवन से सम्बन्धित थी। प्रेमचन्द युग में ही संयुक्त परिवार टूटने लगे थे। उस युग तक वर्ण–व्यवस्था के कारण समाज कई छोटी–छोटी जातियों और उपजातियों में विभक्त हो चुका था। नारी का जीवन कुप्रथाओं की शृंखलाओं से जकड़ा हुआ था। वह सभी प्रकार से पारिवारिक तथा सामाजिक अधिकारों से वंचित थी।

प्रेमचंद के साहित्य में नारी कन्या, पत्नी, माता, वेश्या, बहिन, प्रेमिका आदि अनेक रूपों में आई है। प्रेमचन्द ने नारी की दयनीय स्थिति को समझते हुए अपनी कहानियों में नारी के विविध रूपों को चित्रित किया है– ''प्रेमचन्द का युग भारत में नवजागरण काल के नाम से जाना जाता है।''[3] प्रेमचन्द की साहित्य यात्रा एक सुधारवादी चिंतक से आगे चलकर एक ऐसे क्रान्तिकारी चिंतक के स्तर पर पहुँचती है। भारतीय संस्कृति में नारी को पुरुष के समकक्ष स्थान दिया गया है। भारतीय समाज–व्यवस्था में समाज की इकाई परिवार के अंतर्गत अविवाहित लड़की को प्रायः स्नेह प्रदान किया जाता है और कन्या को देवी का प्रतिरूप तक कहा जाता है, परन्तु व्यवहार में कन्या के प्रति इस प्रकार का आदर्श व्यवहार बहुत कम देाने को मिलता है। 'बड़े घर की बेटी' कहानी में छोटी रियासत के ताल्लुकदार ठाकुर भूप सिंह के यहाँ सात लड़कियाँ हैं और दैवयोग से सबकी सब जीवित हैं। ठाकुर भूपसिंह के कोई लड़का नहीं था। भूपसिंह ने अपनी सभी कन्याओं का पालन–पोषण सुचारू रूप से किया और उनके विवाह में अर्थात् पहली तीन लड़कियों के विवाह में सामर्थ्य से अधिक खर्च भी किया। अपनी चौथी लड़की आनंदी के विवाह में धर्मसंकट आ गया।

'खून सफेद' कहानी एक यथार्थवादी कहानी है। इस कहानी में 1914 के आस–पास ईसाई मिशनरियाँ गरीब हिन्दुओं को बहला–फुसला कर ईसाई धर्म का अनुयायी बना रही थी। इस कहानी में

उस समस्या को उठाया है। कहानी में नारी पात्र मात्र दो हैं। देवकी जो जादोराय की पत्नी है और देवकी की पुत्री शिवगौरी। कहानी में शिवगौरी का चित्रण साधों की बहिन के रूप में किया है। शिवगौरी अपनी माँ के साथ काम में हाथ बंटाती थी। साहब उन दिनों प्रायः अंग्रेजों को कहा करते थे। प्रेमचन्द इस संबंध में लिखते हैं – ''शिवगौरी रोती हुई घर में भागी और देवकी से बोली–दादा को साहब ने पकड़ लिया है। देवकी घबराई हुई बाहर आई। साधो उसे देखते ही उसके पैरों में गिर पड़ा। देवकी लड़के को छाती से लगाकर रोने लगी। गाँव के मर्द औरतें और बच्चे सब जमा हो गये। मेला–सा लग गया।''[4]

'विस्मृति' कहानी 'जमाना' पत्रिका में फरवरी 1915 में प्रकाशित हुई थी। कहानी की नायिका दूजी चित्रकूट के निकट धनगढ़ नामक गाँव की रहनेवाली है। जाति की राजपूत है। इसके दो भाई हैं। शानसिंह और गुमान सिंह। इनकी बहन दूजी के संबंध में प्रेमचन्द लिखते हैं – ''बहिन अत्यंत कोमल, सुकुमारी, सिर पर घड़ा रख कर चलती तो उसकी कमर बल खाती थी, किंतु तीनों अभी तक कुँवारे थे। प्रकटतः उन्हें विवाह की चिन्तान थी। बड़े भाई शानसिंह सोचते, छोटे भाई के रहते हुए अब मैं अपना विवाह कैसे करूँ। छोटे भाई गुमानसिंह लज्जावश अपनी अभिलाषा प्रकट न करते थे।''[5]

'आभूषण' कहानी 'माधुरी' पत्रिका में अगस्त 1923 में छपी थी। आभूषणों के प्रति नारियों का स्वाभाविक लगाव रहा है। इस कहानी में भी मुंशी प्रेमचन्द ने नारी के आभूषण प्रेम को दिखाया है। शीतला नाम की युवती विमल सिंह की पत्नी है। वह एक दिन अपनी सास के साथ कुंवर सुरेश सिंह के घर उनकी नववधू जिसका नाम मंगला है रूप हीना है। लेकिन आभूषणों से जड़ी हुई है। मंगला के उन आभूषणों को देखकर शीतला मन ही मन इस तरह के आभूषणों की इच्छा करने लगी। 'शूद्रा' कहानी चाँद नामक पत्रिका में जनवरी 1926 में प्रकाशित हुई थी। यह एक आदर्शवादी कहानी है। गौरा अपनी माँ गंगा के साथ मदनपुर नाम के गाँव में रहती है। पिता का देहान्त हो गया। विधवा गंगा और उसकी पुत्री गौरा भाड़ झोंकने का काम करती है, बकरियाँ चराती और सुखपूर्वक माँ बेटी रहती हैं। प्रेमचन्द इस संबंध में लिखते हैं –

''अपने पति के मर जाने के बाद गंगा ने कोई दूसरा घर न किया था, न कोई दूसरा धंधा ही करती थी। इससे लोगों को संदेह हो गया था कि आखिर इसका गुजर कैसे होता है और तो छाती फाड़–फाड़कर काम करते हैं, फिर भी पेट–भर अन्न नसीब नहीं होता। यह स्त्री कोई धंधा नहीं करती, फिर भी बेटी आराम से रहती है, किसी के सामने हाथ नहीं फैलाती।''[6]

'सती' कहानी 'चाँद' नामक पत्रिका में मई 1932 में छपी थी। कहानी की पृष्ठभूमि युद्ध भूमि है और युद्ध भूमि में भी एक विरांगना का वर्णन किया गया। सती नाम की इस कहानी में मात्र एक ही नारी पात्र है और उसका नाम है चिंतादेवी। कहानी के अनुसार चिंतादेवी की माँ बाल्यकाल में ही परलोक

सिधार गई थी।''[7] चिंतादेवी के पिता योद्धा थे। अतः चिंता के पालन–पोषण का भार पिता पर पड़ा। संग्राम का समय था, इसलिए चिंता का बाल्यकाल पिता के साथ समरभूमि में कटा। प्रेमचन्द ने आलोच्य कहानी में चिंता का वर्णन करते हुए लिखा है– ''बाप उसे किसी खोह में था वृक्ष की आड़ में छिपाकर मैदान में चला जाता। चिंता निश्शंक भाव से बैठी हुई मिट्टी के किले बनाती और बिगाड़ती। उसके घरौंदे थे, उसकी गुड़िया ओढ़नी न ओढ़ती थी। वह सिपाहियों के गुड्डे बनाती और उन्हें रण–क्षेत्र में खड़ा करती थी। कभी–कभी उसका पिता संध्या समय भी न लौटता परंतु चिंता या भय छू तक न सका। निर्जन स्थान में भूखी–प्यासी रात–रात भर बैठी रह जाती। उसने नेवले और सियार की कहानियाँ कभी न कभी सुनी थी। वीरों के आत्मोत्सर्ग की कहानियाँ और वह भी योद्धाओं के मुँह से सुन–सुनकर वह आदर्शवाहिनी बन गई थी।''[8]

उपर्युक्त वर्णन से हमें पता चलता है कि प्रेमचन्द युग में शिक्षा का प्रसार ग्राम्य जीवन में नहीं था। पुरुषों की ही कम शिक्षा थी। निम्नवर्ग में आर्थिक स्थिति की कमजोरी के कारण नारी की शिक्षा थी ही नहीं। समाज का ढाँचा धर्म प्रधान होने के कारण बाल–विवाह का प्रचलन था। दहेज–प्रथा के कारण बेटियों को भार समझते थे। प्रायः छोटी उम्र में ही लड़की के विवाह का प्रचलन था। नारी को सुकुमारता, रूपलावण्य, वीरांगना आदि के रूप में चित्रित किया है। प्रेमचन्द ने लिखा है कि.....''कली खिल कर फूल हो रही थी।''

संदर्भ :

1. *डॉ॰ बेनीप्रसाद, हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता, पृ. 165*
2. *डॉ॰ कृष्णचन्द्र पाण्डे, प्रेमचन्द के जीवन के विधायक तत्त्व, पृ. 165*
3. *सुभाषिनी शर्मा, उपन्यासकार प्रेमचन्द, पृ. 40*
4. *प्रेमचन्द, मानसरोवर, भाग–8, पृ. 6*
5. *प्रेमचन्द, मानसरोवर, भाग–7, पृ. 155*
6. *प्रेमचन्द, मानसरोवर, भाग–2, पृ. 202*
7. *प्रेमचन्द, मानसरोवर, (200 चुनींदा कहानियों का बृहद संग्रह), पृ. 193*
8. *प्रेमचन्द, मानसरोवर, भाग–2, पृ. 202*